गुजरात में रचित कतिपय दिगम्बर जैन-ग्रन्थ

पन्द्रह शताब्दियों से भी अधिक समय से गुजरात और राजस्थान जैन धर्म के केन्द्र रहे हैं। यहां जैनों में सबसे अधिक बस्ती श्वेताम्बरों की है। समस्त श्वेताम्बर आगम ईशु की पांचवी शताब्दी में सौराष्ट्र के बलभीपुर में एक साथ लिपिबद्ध किया गया था। आगमों की बहुतेरी टीकाएं इसी प्रदेश में लिखी गई हैं। इतना ही नहीं लेकिन संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश एवं प्राचीन गुजराती-राजस्थानी के ललित तथा शास्त्रीय वाङ्मय के सभी ग्रंथों के निरूपक जैन श्वेताम्बर साहित्य का जितना विकास गत प्रायः एक हज़ार वर्षों में इस प्रदेश में हुआ उतना भारत में और कहीं भी नहीं हुआ है। यद्यपि आज गुजरात में दिगम्बर जैनों की जनसंख्या प्रमाण में अल्प है, तथापि एक समय में उनकी संख्या बहुत रही होगी। अभी तो उनकी साहित्य प्रवृत्ति के थोड़े ही अवशेष बचे हुए हैं, इतने प्राचीन एवं विरल हैं कि गुजरात के समग्र जैन साहित्य के इतिहास की दृष्टि से वे अति महत्त्वपूर्ण हैं।

आचार्य जिनसेनकृत 'हरिवंशपुराण' तथा आचार्य हरिषेणकृत 'बृहत्कथाकोश' ये दो संस्कृत ग्रंथ दिगम्बर साहित्य की प्राचीनतम उपलब्ध रचनाओं में से हैं। ये दोनों कृतियां 'वर्धमानपुर' अर्थात् सौराष्ट्र में आये हुये वढ़वाण में लिखी गई हैं 'हरिवंशपुराण' की रचना शक सं. ७०५ (वि. सं. ८३९ - ई. सन् ७८३) में हुई और 'बृहत्कथाकोश' की रचना वि. सं. ९८९ अर्थात शक सं. ८५३ (=ई. सन् ९३१-३२) में-- ज्यौतिषशास्त्र की दृष्टि से जब खर नामक संवत्सर प्रवर्तमान था, तब हुई। जिनसेन ने रचनावर्ष शक संवत् में बताया है और हरिषेण ने विक्रम एवं शक दोनों में।

दिगम्बर सम्प्रदाय के उपलब्ध कथासाहित्य में कालानुक्रम की दृष्टि से 'हरिवंशपुराण' तृतीय ग्रन्थ है, इस हकीकत से उसके महत्व का खयाल सहज ही आएगा; उससे पूर्व के दो ग्रन्थ हैं आचार्य रविषेण का 'पद्मचरित' और जटा-सिंहनंदि का 'वरांगचरित'। इन दोनों का उल्लेख 'हरिवंशपुराण' के पहले सर्ग में ही किया गया है।

'हरिवंशपुराण' बारह हजार श्लोक प्रमाण का ६६ सर्गों में विभाजित वृहद् ग्रन्थ है। बाइसवें तीर्थंकर नेमिनाथ जिस वंश में उत्पन्न हुये थे उस वंश का अर्थात् हरिवंश का वृत्तान्त इसका वर्ण्य विषय है। इस ग्रन्थ की प्रशस्ति में जिनसेन ने कहा है कि सौरों के अधिमण्डल अर्थात् सौराष्ट्र पर जब जयवराह नामक राजा का शासन था, तब कल्याण से जिसकी विपुल श्री वर्धमान होती है ऐसे वर्धमान-नगर में पार्श्व-नाथमन्दिरयुक्त नन्नराजवसति में इस ग्रन्थ की रचना हुई। प्रशस्ति में और भी कथन है कि दोस्तटिका नामक स्थान में तीर्थंकर शान्तिनाथ के मन्दिर में प्रजा ने इस ग्रन्थ का पूजन किया। इस दोस्तटिका के स्थान के बारे में अभी कोई निर्णय नहीं किया जा सकता, फिर भी वह बढ़वाण का समीपवर्ती होगा यह तो निश्चित है ई. सन् वढवाण के राजा जयवराह के बारे में विशेष माहिती इस प्रशस्ति में से प्राप्त नहीं होती है। तथापि कन्नौज के प्रतिहार राजा महीपाल का शक सं० ८३६ (ई० सन् ९१४) का जो एक ताम्रपत्र सौराष्ट्र के डाला गांव में से मिला है उससे ज्ञात होता है कि उन दिनों वढवाण में चाप वंश के राजा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धरणिवराह का शासन था और वह प्रतिहारों का सामन्त था। वढवाण के राज्यकर्ताओं के इन वराहान्त नामों से एक स्वाभाविक अनुमान किया जा सकता है कि 'हरिवंशपुराण' की प्रशस्ति में जिसका उल्लेख है वह राजा जयवराह उपर्युक्त धरणिवराह का चार-पांच पीढ़ी पूर्व का पूर्वज होगा। यह तो स्पष्ट है कि ये राजवी चाप अर्थात् चावडा वंश के थे।[1] तदुपरान्त 'हरिवंश' कार जिनसेन ने अपनी रचना गिरनार पर की। सिंहवाहनी शासनदेवी का जो उल्लेख किया है इससे ज्ञात होता है कि ईशु के आठवें शतक तक के पुराने काल में गिरनार पर नेमिनाथ की शासनदेवी अम्बिका का मन्दिर विद्यमान था।

हरिषेण के 'बृहत्कथाकोश' की रचना इस 'हरिवंशपुराण' से डेढ़ शतक के बाद हुई। साढ़े बारह हजार श्लोकप्रमाण के इस ग्रन्थ में विविध-विषयक १५७ जैन धर्म-कथाएं दी गई हैं। उसके कर्त्ता ने अपना परिचय मौनि भट्टारक के शिष्य के रूप में दिया है। वह कहता है कि जैन मन्दिरों से संकीर्ण चन्द्र जैसी शुभ्र कान्ति से युक्त हर्म्यों से समर और सुवर्णसमृद्ध जनों से व्याप्त वर्धमानपुर में इस कृति की रचना की गई थी। उन दिनों वहाँ इन्द्रतुल्य विनायकपाल नामक राजा का शासन चल रहा था। यह विनायकपाल भी कन्नौज के गुर्जर-प्रतिहार वंश का ही राजा था। विद्वानों के मत से विनायकहाल, क्षितिपाल, हेरम्बपाल आदि नाम इस वंश के सुप्रसिद्ध सम्राट् महीपाल के ही हैं (देखिये-कन्हैयालाल मुन्शी: 'ग्लोरी इट वोझ गुर्जरदेश' ग्रन्थ ३, पृ० १०५ तथा १०८-९)। बृहत्कथाकोश के अन्त में उसके रचना समय के बारे में कर्ता ने जो तफसीलें दी हैं उनसे यह खयाल आता है कि ज्यौतिष की गणना के अनुसार यह ग्रन्थ ५ वीं अक्टूबर, ९३१ से १३ वीं, मार्च ९३२ के दरम्यान किसी समय लिखा गया है (देखिये, 'बृहत्कथाकोश' की डॉ० उपाध्ये की प्रस्तावना, पृ० १२१), और इसमें राज्यकर्ता के तौर पर विनायकपाल का उल्लेख किया गया है। दूसरी ओर, राजा महीपाल का एक दानपत्र ई० सं० ९३१ का प्राप्त हुआ है जिससे प्रतीत होता है कि विनायक-पाल और महीपाल ये एक ही नृपति के दो नाम हैं।

जिनसेन एवं हरिषेण दोनों 'पुन्नाट संघ' के साधु थे। हरिषेण ने अपने गुरु मौनि भट्टारक को 'पुन्नाटसंघाम्बरसंनिवासी' कह कर वर्णित किये हैं और जिनसेन ने स्वगुरु कीर्त्तिषेण के गुरुबन्धु अमितसेन को 'पवित्रपुन्नाटगणाग्रणीर्गणी' के रूप में आलिखित किये हैं; अर्थात् पुन्नाटसंघ दिगम्बर जैन साधुओं का एक समुदाय था। पुन्नाट देश के नांव से वह पुन्नाट कहलाया। खुद हरिषेण ने ही दो कथाओं में जो निर्देश किया है उसके अनुसार पुन्नाट देश दक्षिणापथ में स्थित था।

अनेन सह सङ्घोऽपि समस्तो गुरुवाक्यत:।
दक्षिणापथदेशस्थपुन्नाटविषयं ययौ॥
(कथा १३१, श्लोक ४०)

१—वनराज चावडा ने ई० स० ७४६ में अणहिलवाड पाटण बसाया। उसके पूर्व प्राचीन गुर्जर देश में चावड़ाओं के कम से कम तीन राज्य थे—श्रीमाल में, वढवाण में और पंचासर में। ई० स० ६२८ में भिल्लमाल अथवा श्रीमाल में 'ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त' नामक ज्यौतिष के ग्रन्थ के रचयिता आचार्य ब्रह्मगुप्त कहते हैं कि चापवंश के तिलकरूप व्याघ्रमुख राजा जब वहाँ राज्य करता था तब यह ग्रन्थ उन्होंने लिखा। वढवाण के चापवंश का निर्देश ऊपर किया गया है। वनराज का पिता जयशिखरी और उसके पूर्वज पंचासर के शासक थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुन्नाटविषये रम्ये दक्षिणापथगोचरे।
तलाटवीपुराभिख्यं बभूव परमं पुरम्।

(कथा १४५, श्लोक ६)

दक्षिणापथ में भी पुन्नाट कर्णाटक का एक भाग था। अद्यपर्यन्त इसके बारे में जो बहस हुई है (देखिये 'इंडियन कल्चर', ग्रन्थ ३, पृ० ३०३-१, पर ए० बी० सालेटोर का 'एन्शेयन्ट किंगडम ऑफ पुन्नाट', नामक लेख तथा 'काणे अभिनन्दन ग्रन्थ' में एम्० जी० पाई का 'रूलर्स ऑफ पुन्नाट' नामक लेख), उसके अनुसार कावेरी और कपिनी नदियों के बीच का प्रदेश–जिसका मुख्य शहर कीर्त्तिपुर (अथवा किट्टुर) था–वही प्राचीन पुन्नाट प्रदेश है। यह स्पष्ट ही है कि 'पुन्नाट संघ' का नाम इस प्रदेश के नाम पर से ही रक्खा गया है। कर्णाटक दिगम्बर जैनों का केन्द्रस्थान था और आज भी है, लेकिन वहां के प्राचीन साहित्य में या लेखों में कहीं भी 'पुन्नाट संघ' का उल्लेख नहीं मिलता। कभी कभी किट्टुर संघ' का उल्लेख प्राप्त होता है जिसका नाम पुन्नाट प्रदेश के पाटनगर किट्टुर पर से रक्खा गया है और इसी से शायद 'पुन्नाट संघ' विवक्षित हो सकता है। किन्तु यह तो निश्चित है कि विक्रम के नववें शतक के पूर्व ही कर्णाटक-अन्तर्गत पुन्नाट का एक दिगम्बर साधु समुदाय सौराष्ट्र में आकर विशेषत: वढवाण के नज़दीक के प्रदेश में स्थिर हुआ था और अपने मूलस्थान के नाम से 'पुन्नाट संघ' नाम से प्रख्यात हुआ था। 'बृहत्कथाकोश' की अनेक कथाओं में दक्षिणापथ के नगरों का जो उल्लेख मिलता है वह भी इस दृष्टि से ध्यान देने योग्य है। मध्य-कालीन गुजरात का जैन साहित्य-विशेषत: प्रबन्ध साहित्य यह स्पष्टतया दिखलाता है कि उस समय में गुजरात में इसके अलावा दूसरे भी दिगम्बर साधु-समुदाय थे तथा दिगम्बर और श्वेताम्बरों के बीच अनेक विषयों में तीव्र स्पर्धा प्रवर्तमान थी। राजा सिद्धराज जयसिंह (ई. स. १०९४–११४३) के दरबार में श्वेताम्बर आचार्य वादी देवसूरी और दिगम्बर आचार्य कुमुदचन्द्र के बीच जो प्रसिद्ध विवाद हुआ जिसमें आखिर कुमुन्दचन्द्र की पराजय हुई उसका निरूपण यशश्चन्द्ररचित समकालीन संस्कृत नाटक 'मुद्रितकुमुद-चन्द्रप्रकरण' में किया गया है तथा इस घटना का चित्रण आचार्य जिनविजयजी के द्वारा प्रकाशित चन्द समकालीन चित्रों में भी मिलता है।

कर्णाटकविनिर्गत दिगम्बर साधु समुदाय सौराष्ट्र में स्थित हुआ यह हकीकत गुजरात एवं कर्णाटक के सांस्कारिक सम्पर्क की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह समग्र विषय एक अलग अध्ययन का पात्र है। यह तो अब निश्चित हुआ है कि उन दिनों वढवाण पश्चिम भारत के दिगम्बर जैन सम्प्रदाय का एक महाकेन्द्र था। दिगम्बर साहित्य के दो सबसे प्रसिद्ध प्राचीन ग्रन्थ क्रमानुसार ठीक आठवीं और दशवीं शताब्दी में वढवाण में ही लिखे गये, तथा इसी नगर में रचित श्वेताम्बर साहित्य के प्रथम उपलब्ध ग्रन्थ जालिहरगच्छ के आचार्य देवसूरिकृत प्राकृत 'पद्मप्रभचरित' का रचनावर्ष सं० १२५४ (ई. स. ११९८) है।

गुजरात की भूमि में ही हुए, इसके बाद के समय के, दो दिगम्बर कवियों के बारे में अब मैं कुछ कहूँगा। ये दो कवि हैं जसकित्ति या यशःकीर्त्ति और अमरकीर्त्ति, जिन दोनों की कृतियाँ अपभ्रंश भाषा में लिखी हुई मिली हैं।

यशःकीर्ति की दो अपभ्रंश रचनाएँ विदित हुई हैं। इनमें से एक 'पाण्डवपुराण' है, जिसमें जैन महाभारत की कथा अपभ्रंश पद्य में दी गई है। यह कृति वि० सं० ११७९ (ई. स. ११२३) में विल्हसुत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हेमराज नामक श्रावक की विनती से नवगांवपुर में लिखी गई।[1] इस नवगांवपुर का स्थान निश्चितरूप से स्थापित किया नहीं जा सकता। यशःकीर्ति गुणकीर्त्ति के शिष्य थे। तीर्थंकर चन्द्रप्रभ की जीवनी का आलेखन करने वाली उनकी दूसरी अपभ्रंश कृति हैं चदप्पहचरिउ'। इसकी सं० १५७१ में लिखी हुई १५० पत्र की एक पाण्डुलिपि मेरे मित्र प० अमृतलाल मोहनलाल ने मुझे दी थी। 'चंदप्पहचरिउ' में रचनावर्ष नहीं दिया है, तथापि उसको 'पाण्डवपुराण' के रचनाकाल के अरसे में रख दिया जा सकता है, 'चंदप्पहचरिउ' का गन्थाग्र २३०८ श्लोकों का है। उसमें कर्त्ता ने जो उल्लेख किया है उसके अनुसार हुंबड जाति के कुमारसिंह के पुत्र सिद्धपाल की विनती से गुर्जर देश में उम्मत्त गाँव में उसकी रचना हुई। उम्मत्त गांव उत्तरगुजरात में स्थित वडनगर के समीप का उमता गांव होगा। 'पाण्डवपुराण' की रचना जिस स्थान में हुई उस नवगांवपुर का भी गुजरात में होना असम्भव नहीं है, तथापि इसके लिये स्पष्ट प्रमाण नहीं मिला है। मेरे पास की पाण्डुलिपि में से 'चंदप्पहचरिउ' के आदि-अन्त में से ऐतिहासिक दृष्ट्या महत्वपूर्ण भाग यहां रखता हूं।

आदि

'हुंवडकुलनहयलि पुप्फयंत वहुदेउ कुमरसिंहु वि महत।
तहं सुउ णिम्मलगुणगणविसालु सुप्रसिद्ध पभणइ सिद्धपालु।
जसकित्ति विवुह करि तुहुं पसाउ मह पूरइ पाइअकव्वभाउ।
त णिसुणिवि सो भासेइ मंदु पंगलु तोड़ेसइ केम चंदु।'

अन्त

गुज्जरदेसह उम्मत्तगामु तहिं छड्डासुउ हुउ दोणणामु।
सिद्धउ तहो णंदणु भव्वबन्धु जिणधम्म भारि जं दिण्णु खधु।
तसु सुउ जिट्ठउ बहुदेउ भव्वु जि धम्मकज्जि विव कलिउ दव्वु।
तहो लहु जायउ सिरिकुमरसिंहु कलिकालकरिंदहु हणणसिंहु।
तसु सुउ संजायउ सिद्धपालु जिणपुज्जदाणगुणगणरसालु।
तहो उवरोहें इह कियउ गथु हउण मुणमि किंपि वि सत्थगंथु।
धत्ता। जा चंददिवायर सव्व वि सायर जा कुलपव्वय भूवलउ।
ता यहु पयट्टउ हियइं चहुट्टइ (उ) सरसइदेविहिं मुहनिलउ।

इय सिरिचंदप्पहचरिए महाकइजसकित्तिविरइए महाभव्वसिद्धपाल सवणभूसण सिरिचंदप्पह सामिणिव्वाणगमणणाम एयारहमो संधी समत्तो।।'

इस पाण्डुलिपि का हस्तलेख सौराष्ट्र के पूर्वतट पर के ऐतिहासिक नगर घोघा में हुआ था। उसकी पुष्पिका इस तरह है:—

---

१. कस्तूरचन्द कासलीवाल, 'प्रशस्तिसंग्रह', जयपुर १९५०, प्रस्तावना, पृ० १५। हस्तप्रतविषयक टिप्पण के लिए देखिये पृ० १२२-२७.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'सं० १५७१ वर्षे आषाढ वदि १२ बुधे अद्येह धोधाद्रंगे श्रीचंद्रप्रभचैत्यालये श्रीमूलसंघे सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे श्री कुंदकुंदाचार्यान्वये भट्टारक श्रीपद्मनंदिदेवास्तत्पट्टे भ० देवेन्द्रकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्रीविद्यानंदिदेवास्तत्पट्टे भ० श्रीमल्लिभूषणदेवास्तत्पट्टालंकार गच्छनायक जिनाज्ञाप्रतिपालक छत्रीसगुणविराजमान बइतालीसदोषनिवारक औदार्यस्थैर्यगाम्भीर्यादिगुणविराजमान भट्टारक श्रीलक्ष्मीचंददेवोपदेशात् हुंबडज्ञातीय एकादशप्रतिमाधारक द्वादशविधतपश्चरणनिरत त्रिपंचास··· ·····' (पाण्डुलिपि का अन्तिम पत्र लापता होने से पुष्पिका की आखिरी चन्द पंक्तियां नहीं मिलती ।)

इसके बाद का ग्रन्थ है अमरकीर्त्तिकृत 'छकम्मुवएसो' अथवा 'षट्कर्मोपदेश' । यह श्रावकों के धर्म का आलेखन करनेवाला अपभ्रंश काव्य है । इसकी रचना महीतट प्रदेश के गोद्रह (पंचमहाल जिले के गोधरा) में सं० १२७४ (ई० स० १२१६) में हुई है। २५०० पंक्तियों के इस ग्रन्थ का सं. १५४४ में लिखा हुआ हस्तलेख अपभ्रंश और प्राचीन गुजराती के सुप्रसिद्ध विद्वान् स्व० प्रो० केशवलाल हर्षदराय ध्रुव ने सर्वप्रथम प्राप्त किया था ।[1] तत्पश्चात् प्रो० मधुसूदन मोदी ने उसका सम्पादन किया और गायकवाड्स् ओरियेन्टल सिरीज में उसको प्रसिद्ध करने का आयोजन हो गया है। 'छकम्मुवएसो' के कर्त्ता अमरकीर्त्ति दिगम्बर सम्प्रदाय के माथुर संघ के चन्द्रकीर्त्ति के शिष्य थे । नागर कुल के गुणपाल एवं चच्चिणी के पुत्र अम्बाप्रसाद की प्रार्थना से इस काव्य की रचना हुई । कर्त्ता के अपने ही कथन के अनुसार अम्बाप्रसाद उनका छोटा भाई था । इससे विदित होता है कि अमरकीर्त्ति पूर्वाश्रम में नागर ब्राह्मण थे और बाद में उन्होंने दिगम्बर साधु की दीक्षा ली थी । उनका यह भी विधान है कि 'छकम्मुवएसो' की रचना के समय गोद्रह में चौलुक्य वंश के कर्णराजा का शासन प्रवर्त्तमान था । गोद्रह के चौलुक्य राजाओं की शाखा अणहिलवाड पाटण के चौलुक्य राजवंश से भिन्न है, और अमरकीर्त्ति ने जिसका उल्लेख किया है वह कर्ण उससे करीब सवा सौ वर्ष पूर्व के गुजरात के चौलुक्य नृपति कर्णदेव (सिद्धराज जयसिंह के पिता कर्ण सोलंकी) से भिन्न है ।

'छकम्मुवएसो' की प्रशस्ति में अमरकीर्ति ने अपने अन्य सात ग्रन्थों का उल्लेख किया है:—

'नेमिनाथचरित्र', 'महावीरचरित्र', 'यशोधरचरित्र', 'धर्मचरित्र टिप्पण', 'सुभाषितरत्ननिधि', 'चूड़ामणी' और 'ध्यानोपदेश' । तदुपरान्त वह कहता है कि लोगों के आनन्ददायक बहुतेरे संस्कृत-प्राकृत काव्य भी उसने लिखे थे । परन्तु इनमें से एक कृति अभी मिलती नहीं है ।

प्रमाण में प्राचीन काल में गुजरात में रचित दिगम्बर साहित्य की ये उपलब्ध रचनाएँ हैं ।[2] यदि ऐसी अन्य कृतियों की भी खोज की जाय तो गुजरात के दिगम्बर सम्प्रदाय के इतिहास पर एवं तद्द्वारा गुजरात के सांस्कृतिक इतिहास पर ठीक-ठीक प्रकाश डाला जा सकेगा ।

---

१. 'छकम्मुवएसो' के आदि-अन्त के अवतरण के लिए देखिये मोहनलाल दलिचन्द देसाई, जैन गुर्जर कविओं', भाग १, प्रस्तावना, पृ० ७६-७८; केशवराम शास्त्री, 'आपणा कविओं', पृ० २०४-५१ ।

२. प्राचीन गुजराती में भी थोड़ा कुछ दिगम्बर साहित्य मिलता है । श्री मोहनलाल देसाई ने ('जैन गुर्जर कविओं', भाग १. पृ० ५३-५५) मूलसंघ के भुवनकीर्त्ति के शिष्य ब्रह्मजिनदासकृत 'हरिवंशरास' (सं० १५२०), 'यशोधर रास', 'आदिनाथ रास' और 'श्रेणिक रास' का उल्लेख किया है । दिगम्बरकवि रचित पाँच अज्ञात फागु-काव्यों का परिचय श्री अगरचन्द नाहटा ने दिया है ('स्वाध्याय' त्रैमासिक, पु० १, अंक ४), जिनमें से रत्नकीर्ति का 'नेमिनाथ फाग' गुजरात के भड़ौच के नजदीक के गांव हांसोट में रचा हुआ है । गुजरात में रचित दिगम्बर साहित्य के उपरान्त गुजरात में जिनकी प्रतिलिपि की गई हो ऐसे दिगम्बर ग्रन्थों के लेखन-स्थान एवं लेखनवर्ष का अध्ययन यदि पाण्डुलिपियों की मुद्रित सूचियां आदि के आधार पर किया जाय, तो भी गुजरात के दिगम्बर सम्प्रदाय के प्रसार के बारे में स्थलकालदृष्ट्या बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त हो सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org